अध्याय दूसरा

॥श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वत्यै नमः॥ श्री सिद्धारूढाय नमः॥

"श्री सिद्धारूढ स्वामीजी भगवान श्री महादेव का इस पृथ्वीपर धारण किया एक प्रत्यक्ष महावतार ही है। यह कृपामूर्ति प्राणियों को मोक्ष प्रदान करने के लिए प्रकट हुई है। गुरुशांतप्पा के घर जन्म लेकर आपने पूरे विश्व में स्वयं की ख्याति प्रस्थापित की। हे गुरुदेव, ज्ञान के सागर, मैं आपको मस्तक झुकाकर वंदन करता हूँ।"

श्री सिद्धारूढ गुरुदेवजी को मेरा प्रणाम। हे सद्‌गुरु महाराजजी, केवल आपके स्मरण मात्र से ही संकटों का निवारण होता है। मेरे हृदय में निवास कर के आप यह ग्रंथ मुझसे लिखवाईए। दयाघन श्री सिद्धारूढ अविरत निराकार ऐसे ब्रह्मरूप में स्थित होकर भी केवल भक्तों के लिए देह धारण कर पृथ्वी पर अवतरीत हुए। ज्ञानी जनों की जन्मभूमि होने वाला यह सुंदर भारत देश, इस पृथ्वी लोक पर स्थित परब्रह्म के प्रति चिंतन तथा मनन करने वाले साधकों का एक आश्रय स्थान है। निजाम देश में वंशदुर्ग नाम का एक पुनित तथा सुंदर गाँव है। उस गाँव में भगवान श्री शिवजी का अविरत चिंतन करने वाला गुरुशांतप्पा नाम का एक व्यवहार कुशल गृहस्थ रहता था। महापतिव्रता देवमल्लम्मा उसकी पत्नी थी। शिवभक्तों का धर्म यथायोग्य रीति से पालन करने वाले वे पति पत्नी दोनों संतोषमय जीवन व्यतित कर रहे थे। दोनो श्री महादेवजी की मानसिक रूप से पूजा तथा ध्यानादि करके श्री शिवजी को प्रसन्न करते थे तथा घर आए साधुसज्जनों की पूजा कर के अतिथि धर्म का पालन करते थे। विवेक (सार तथा असार विचार) तथा अन्य प्रकार के साधनों से संपन्न हुए वे दोनो दयालु श्री सद्‌गुरु श्री वीरभद्रस्वामीजी की अपने घर में नित्य पूजा करते थे। उनकी सेवा से तृप्त हुए तथा सदैव ब्रह्मानंद में लीन रहनेवाले सद्‌गुरुनाथजी आनंद से उन्हे बोधामृत प्राशन कराते थे। सद्‌गुरु श्री वीरभद्रस्वामीजी उन्हे "ब्रह्म तथा आत्मा ये दोनों एक ही हैं" इस प्रकार का उपदेश स्थापित करने वाले और ज्ञान रस से पूर्ण ऐसे ग्रंथ, विशेष रुप से

"शून्यसंपादने" यह ग्रंथ ("शून्यसंपादने" यह कन्नड भाषा में लिखा ग्रंथ बारहवे सदी के प्रख्यात वीरशैव संतों के वचनों को संपादित करके लिखा हुआ ग्रंथ है तथा पंधरा और सोलहवे सदियों के दरमियान इस ग्रंथ के चार अनुवाद लिखे गए थे।) पढकर सुनाते थे। इन सभी ग्रंथों में जीव (आत्मा), शिव (परमात्मा) इन दोनों के एक भाव का प्रतिपादन किया है। श्री वीरभद्रस्वामीजी के मुख से जीव और शिव की एकरुपता का विश्लेषण सुनकर तथा आत्मानंद प्राप्त होने के कारण पति पत्नी के मन की सारी आध्यात्मिक शंकाओंका निरसन हुआ था।

इस दंपती के तीन पुत्र थे। उनमें से तिसरे पुत्र का नाम "सिद्ध" था तथा उसका जन्म शक १७५८ (इ.स. १८३६) में दुर्मुख संवत्सर, चैत्र शुक्ल नवमी के दिन हुआ। बाल सिद्ध अपने माता के साथ श्री वीरभद्रस्वामीजी का वेदांत शास्त्र पर प्रवचन नियमित रुप से तथा एकाग्र मन से प्रेमपूर्वक सुनता था। बाल्यावस्था में प्रतिदिन इस प्रकार शास्त्र श्रवण करने के कारण तीन वर्ष आयु तक बाल सिद्ध वेदांत शास्त्रों में पूर्ण रुप से संपन्न हो गया। इस प्रकार वेदांत शास्त्रों का श्रवण करते समय एक दिन उसने "लिंगैक्य विचार" (यानी जीव और शिव या आत्मा और परमात्मा इनका मिलन होने की स्थिति) के विषय में प्रवचन सुना और उसके बाद बाल सिद्ध दिनरात स्वयं उस स्थिति को प्राप्त करने के बारे में सोचने लगा। एक ओर मन में इस आकांक्षा को धारण करके दूसरी ओर जीव तथा शिव ये दोनो एकही है यह भाव मन में दृढ़ हो इसलिए सदैव सभी भूत प्राणियों के प्रति एक समान भाव रखने लगा। सब को सुखी करने का भाव ह्रदय में रखते हुए वह चौथे वर्ष से अपने मित्रों के साथ खेलने लगा।

एक दिन छोटे बच्चों के साथ मिलकर खेलते समय, बच्चों ने सिद्ध के पास खाने के लिए तिल माँगे। तत्काल सिद्ध अपने मित्रों को लेकर घर पहुँचा। रसोईघर में जाकर देखा लेकिन सिद्ध को उसकी माता दिखाई न दी और तिलों से भरी छोटी मटकी छींके पर रखी हुई दिखाई दी। छींका उँचाई पर टँगा होने के कारण उसका हाथ वहाँ तक पहुँच न पाया, इसलिए उसने एक लाठी से मटकी के तल में एक छोटा सा छेद किया और जब उस छेद से तिलों की धार जमिन पर गिरने लगी तब उसने मित्रों को तिल लेने के लिए कहा। मित्रों ने

उनके पास होने वाले वस्त्र जमिनपर बिछाएँ और बहुत सारे तील उनमें इकट्ठा करके उनकी गठरियाँ बाँध ली। वह दृश्य देखते ही अन्य गाँववाले वहाँ आ पहुँचे। छींके पर लटकाई हुई मटकी छोटी होने के बावजूद नीचे गिरे हुए तिलों की अमित राशी देखकर वहाँ इतने तिल कहाँ से गिरे होंगे ये सोचकर लोग हैरान हो गए। वे समझ गए की यह बाल सिद्ध का ही चमत्कार होगा। कई बड़े बड़े मटके उन तिलों से भरे जा सकते थे इतने तिल देखकर प्रजा जनों में बाल सिद्ध के अलौकिक ख्याति के चर्चे होने लगे। इतने में सिद्ध की माता वहाँ आ पहुँची और अपने बेटे की कृति देखकर उसने पूँछा, " बाल सिद्ध यह सब कैसे हुआ?" तब मंद हास्य करते हुए बाल सिद्ध ने कहा, "माताजी, यह चमत्कार मैंने नहीं किया। मैं निश्चय पूर्वक यह समझता हूँ की आपने की हुई गुरुसेवा, जो अतुलनीय होती है, बस उसी गुरुसेवा की यह महिमा है। फिर भी केवल आप पूँछ रही है इसलिए आप को बताता हूँ, सुनिए! मान लीजिए की यह तिल की मटकी जैसे किसी एक ज्ञानी व्यक्ति का देह है। मान लीजिए उस मटकी अंदर स्थित समस्त तिल जैसे उस व्यक्ति के हृदय में स्थित ज्ञान तथा उपदेश पर बोध वाक्य है। मटके तिलों से भर जाने के उपरांत भी तिल बचे हुए है, इसका अर्थ कई अज्ञानी जीवात्मा इन बोध वाक्यों को अस्वीकार करते हैं, परंतु कुछ विशिष्ट जीवात्माएँ (मुमुक्षु) इन बोध वाक्यों को स्वीकार करके अपना उद्धार कर लेते हैं।" सिद्ध के मुख से निकले हुए इन शब्दों को सुनकर मल्लम्मा धन्य हो गई और मन ही मन में कहने लगी की सिद्ध पूर्ण रूप से शिव का ही अवतार होगा, परंतु हम लोग अब तक इस सत्य को पूरी तरह से समझ नहीं पाएँ हैं। मल्लम्मा के हृदय में अपने पुत्र के प्रति स्नेह भर आने के कारण उसने बाल सिद्ध को हृदय से लगाया और उसे ममता से दुलारने लगी परंतु बाल सिद्ध उसकी गोद से छुटकर अपने मित्रों के साथ खेलने के लिए भाग गया। इस तरह से खेलते समय एक दिन मल्लम्मा ने उसे कहा, "बाल सिद्ध, अब तुम पाँच वर्ष के हो गए। इसके बाद तुम प्रतिदिन पाठशाला जाया करो।" सिद्ध ने कहा, "माताजी, ये कौन सा नया धंधा आपने मुझे सौंप दिया? अंदर बाहर चारो ओर पाठशाला ही तो है; जहाँ जीवात्मा स्वयं के अंत:करण में स्थित चैतन्य में (चैतन्य यानी आत्मा अथवा ब्रह्म) श्री शिवजी का अनुभव करता है और वही

परमशिव (परमात्मा) बाहरी जगत के चराचरो में भी देखता है, ऐसी पाठशाला में मैं खुश हूँ। ऐसी स्थिति में, आप जिस पाठशाला में मुझे जाने की आज्ञा दे रही है वहाँ जाने का क्या प्रयोजन, जहाँ केवल व्यावहारिक शिक्षा पाकर जीवात्मा स्वयं के हृद्य में स्थित भगवान को भूलकर अज्ञान के बंधन में पडता है?" उसके ये बोल सुनकर मल्लम्मा चकित हो गई और उस दिन से उसने सिद्ध को अपने गुरुजी के समीप बिठाकर उसे वेदांत श्रवण कराया।

इस प्रकार समय बीतता जा रहा था की एक दिन बाल सिद्ध एक भैंस पर आरूढ़ हो गया और उसने अपने मित्रों को बुलाकर कहा, "यह देखो, मैं एक अति सुंदर हाथी पर आरूढ़ हुआ हूँ, आप सब जोरजोरसे वाद्य बजाकर नाद कीजिए, शीघ्र जाईए, हम सब मिलकर अपने गाँव में ही उत्सव मनाएँगे।" उसकी बाते सुनकर सभी बच्चे आनंदित हुए। अनेक प्रकार के वाद्यों का नाद चारो ओर सुनाई देने लगा। बच्चे भी किलकारियों के साथ हँसते हँसते चलने लगे परंतु भैंस अपने जगह से टस से मस न हुई। अनेक प्रयत्नों के बावजूद भी भैंस हिली नही। चीखने चिल्लाने से तथा मारपीट से भी भैंस पर कुछ भी परिणाम नहीं हुआ। तब बाल सिद्ध रुष्ट होकर बोला, "हे भैंस, तू तत्काल मर जा," तत्क्षण भैंस निर्जीव होकर जमिनपर गिर गई। बच्चों ने तुरंत भागकर मल्लम्माको उसकी भैंस के मरने की वार्ता पहुँचाई। बाल सिद्ध ने भैंस को शापित करने से भैंस तत्काल मृत होकर जमिनपर गिर जानेकी वार्ता सुनते ही मल्लम्मा भौंच्चकी सी रह गई और भागते हुए बाल सिद्ध के पास पहुँच गई। वहाँ जाकर उसने देखा की बाल सिद्ध मृत भैंस के पास खडा था। वह दृश्य देखकर मल्लम्मा आक्रोश करते हुए कहने लगी, "शिव शिव, क्यों तुमने भैंस को मारा? हे भगवान अब मैं क्या करुँ?" माताजी को आर्त स्वर में रोते हुए देखकर सिद्ध के मन में दया उत्पन्न हुई और वह बोला, "माता, आपको अपनी भैंस चाहिए, है ना? तो आप इतना शोक क्यों कर रही है?" तत्पश्चात उसने "ॐ नम: शिवाय" का मंत्रोच्चारण करते हुए मृत भैंस को स्पर्श किया, तत्काल भैंस जीवित हो उठी और झट से सँभल के खडी हो गई। वहाँ इकट्ठे हुए गाँववाले यह दृश्य देखकर आश्चर्यचकित हो गए और कहने लगे, "इस बालक ने यह अघटित

करनी कर दिखाई है, निश्चित ही यह बालक श्री शंकर अथवा कोई श्रेष्ठ ऋषि है, जिसने हमारा उद्धार करने के लिए यहाँ अवतार धारण किया है"।

उस समय बाल सिद्ध ने कहा, "इस भैंस की तरह मनुष्य के मन में स्थित अहंकार बुद्धि सदुपदेश को अनसुना करते हुए बदलती नही (स्थिर रहती है)। शक्तिशाली आत्मा इस अहंकार बुद्धि का तमोगुण नष्ट करने के उद्देश्य से उसपर आरूढ़ हो जाता है, परंतु अनेक प्रयत्नों के बावजूद भी जब अहंकार बुद्धि अचल रहते हुए ब्रह्मज्ञान प्राप्ति के मार्गपर चलती नही। यह देखकर आत्मा उसका विनाश करने का निर्धार करती है, तब वह लय हो जाती है। उस समय जिस माया ने इस अहंकार बुद्धि का दीर्घ काल तक लालन पालन किया रहता है, वह भागते हुए वहाँ प्रकट होती है और अहंकार बुद्धि का नाश न करने की आत्मा से बार बार विनती करती है। माया के करुण वचनों को सुनकर आत्मा अहंकार बुद्धि को विनाश से बचा तो लेती है, परंतु वही अहंकार बुद्धि अब भक्ति भाव के साथ इस जगत में रहती है।" उसका यह सुविचारपूर्ण भाषण सुनकर वहाँ इकट्ठे हुए लोग कहने लगे, "हम सब लोगों में आयु में इतना छोटा होने के बावजूद भी इसका यह ज्ञान अतर्क्य है। इसके यह गहन विचार सुनकर आश्चर्य होता है। ऐसे सुंदर तथा गुणी बालक को जन्म देने वाली उसकी माँ सचमुच में धन्य है। उसके मित्र कहलानेवाले हम भी धन्य हो गए। यह तो साक्षात श्री गुरुदत्तात्रयजी के समान श्रेष्ठ है।"

एक दिन बाल सिद्ध ने अपने सभी मित्रों को एक तालाब में स्नान के लिए आमंत्रित किया। सब मित्र वहाँ आनंदित होकर तालाब के किनारे पहुँच गए और एक के बाद एक पानी में उतरे। परंतु उनमें से एक भय के कारण किनारे पर ही खड़ा रहा। वह पानी में उतरने के भय से ही किनारे पर खड़ा है यह जान कर सिद्ध ने उसे खींचकर पानी में उतार दिया। वह बालक डरपोक होने के कारण जोर जोर से चिल्लाने लगा और उसका चीखना चिल्लाना सुनकर सभी बालक वहाँ इकट्ठा हो गएँ तथा सिद्ध से उसे छोड़ देने की विनती करने लगे। परंतु सिद्ध उनकी विनतियों को अनसुनी करता हुआ उस बालक को गहरे पानी में ले गया। सबके सामने सिद्ध उस बालक के साथ गहरे पानी में प्रविष्ट हो गया। कुछ समय पश्चात उस बालक को गहरे पानी में डुबाकर सिद्ध को अकेले

ही किनारे लौटते हुए देखकर अन्य बालक कहने लगे की वह बालक तो मर ही गया होगा और उन्होने सिद्ध को उस बालक के मृत्यु के लिए दोषी ठहराया। उसके बाद बाल सिद्ध ने कहा, "अब उसका भय तथा दुख दोनों ही नष्ट हो गए हैं। जब शरीर ही नही रहा, तब भय कहाँ का?" उनमें से एक बालक ने भागकर उस बालक की माता को बताया की सिद्ध ने उसके पुत्र को मार दिया है। अपने इकलौते पुत्र के मृत्यु की वार्ता सुनते ही बावली हुई वह माता भागकर वहाँ पहुँची और उसने सिद्ध से कहा, "सिद्ध! यह कैसी दुष्टता है तुम्हारी!" उसपर सिद्ध ने कहा, "माता, इसमें मैं ने कौन सी दुष्टता दिखायी? आपका पुत्र जल रुपी परमात्मा के गोदी में लीन हो जाने के कारण पूर्ण रूप से भयरहित हुआ है।" शोक से पगलाई हुई वह माता बोली, "बस करो तुम्हारा यह वेदांत पर भाषण! निश्चयतापूर्वक तुमने ही मेरे पुत्र को मारा है। हमारे घर की शोभा बढ़ानेवाला मेरा पुत्र रुपी रत्न तुमने तालाब में फेंक दिया है, मुझे वह अभी इसी समय वापस लाकर दो।" कहते हुए उसने रो रोकर झमेला खड़ा कर दिया। तत्पश्चात सिद्ध ने कहा, "माते, क्यों बिना किसी कारण के आप शोक करती है? आपका पुत्र इस आनंद सागर में जीवित ही है। आप एक बार इसे हाँक देकर बुलाइए, वह तत्काल आपके पास पहुँच जाएगा।" यह बात सुनते ही उस महिलाने हाँक दी, "देवदत्त, पुत्र देवदत्त!" और पलक झपकने से पहले ही देवदत्त गहरे पानी से बाहर आया और तैरते हुए किनारे पहुँच गया| उसकी माता ने उसे झट से गोदमें उठाया और पूछा, "पुत्र, इतने समय तुम कहाँ थे?" देवदत्त ने कहा, "माताजी, मैं तो ब्रह्मानंद में लीन था| अब बाहर आने के पश्चात फिर एक बार इस जगत के दुख रुपी जंजाल में फँस गया हूँ। अब आप ही मुझे सँभालिए।" उसकी माता ने कहा, "पुत्र, हम सभी यही समझ रहे थे की गहरे पानी में डूबकर तुम्हारी मृत्यु हुई होगी| तुम्हे जीवित देखकर मैं कृतकृत्य हो गयी हूँ। वर्ना तुम्हारे पीछे पीछे मेरे प्राण भी इस शरीर को छोड़कर चले जाते।" ऐसा कहते हुए उसने प्रेम से देवदत्त को गले लगाया। उस समय उसकी नयनों से आनंद के आँसू अविरत बह रहे थे| यह दृश्य देखकर सभी हर्षित हुअ। तब सिद्ध ने कहा, "हे सज्जनो, ध्यानपूर्वक सुनिए। समझ लीजिए की यह बालक एक अज्ञानी जीवात्मा है। यह जीवात्मा उपाधि का (उपाधि यानी कोई

विशेष गुण, पदवी, चिन्ह आचरणविशेष आदि. इस उपाधि के कारण लोग एक दूसरे को श्रेष्ठ या कनिष्ठ समझने लगते है| इसे कोई बंधनकारक वस्तु अथवा परिस्थिति भी कह सकते है।) त्याग नही कर सकता। उपाधि दूर करने के भय से असीम दुख प्राप्त होता है। इसीलिए दयालु सतगुरुनाथजी वहाँ आकर जीवात्मा का देहाभिमान नष्ट करके उसे बलपूर्वक ब्रह्मानंद (ब्रह्म में लीन होने का आनंद) दिलाते है।" बाल सिद्ध के मुख से निकले इस संभाषण को सुनकर गाँव के समग्र जन कहने लगे, "निश्चित ही यह भगवान श्री महादेव होंगे, अन्यथा ऐसा श्रेष्ठ ज्ञान किसी बालक के मुख से सुनाई देता है क्या?" तत्पश्चात सभी जन सिद्ध के चरणो में शीश रखने हेतु उसके पास पहुँचने लगे, परंतु वह हँसते हुए अपने घर की ओर प्रस्थान कर गया।

एक दिन बाल सिद्ध अपने मित्रों के साथ एक जामुन के पेडों के बाग में गया। पेडों के नीचे गिरे हुए पके जामुनों को इकट्ठा करने हेतु सभी बालक चारो ओर दौड पडे। उस समय बाल सिद्ध एक जगह अचल खडा होकर विचारों में मग्न हो गया। इस त्रिभुवन में स्थित हर वस्तु का केवल ईश्वर ही कारण होते हुए भी ये जीवात्माएँ उसे भूलकर माया से मोहित होकर ऐहिक विषयो में पूर्ण रूपसे मग्न हो गए हैं। अब इन्हे मेरे पास बुलाकर विवेक का सही अर्थ समझाना आवश्यक है। ऐसा मन ही मन में निर्धार करते हुए उसने जमीन पर एक जामुन रखकर संकल्प किया। तत्काल वहाँ जामुनों का ढेर लग गया। उसे देखते ही सभी बालक वहाँ दौड़ते हुए (ईश्वरीय शक्ति का प्रताप न जानने के कारण) आए और जामुन चुनने लगे। बहुत सारे पके हुए जामुन खाने के पश्चात उन्होंने ढ़ेर सारे जामुन घर ले जाने के लिए वस्त्रो में बाँध लिए। तब सिद्ध ने उन्हे कहा, "आपने भरपेट जामुन तो खा लिए, परंतु एक पल भर के लिए भी यह नही सोचा की किस की कृपा के कारण ये जामुन आप को प्राप्त हुए हैं।" तब बालकोंने कहा, "हालाँकि, जगत्चालक ईश्वर की कृपा से हमें ये स्वादिष्ट फल प्राप्त हुए है, फिर भी हम हमारी मूर्खता के कारण उसे पहचान नही पाए। इसलिए अब ये सारे फल यही छोड़कर हम सब घर चलेंगे"। तत्पश्चात सिद्ध ने कहा, "इस समय आप सभी ये जामून भले ही यही छोडकर जाएँगे, परंतु आपके ये नेत्र जो सब कुछ देखते रहने के कारण आपकी दृष्टि विषय वस्तुओं पर पड़ते ही

आपका मन अपने आप ही विषयों के पास आकर्षित हो जाएगा। आप भले ही आँखे बंद भी कर ले, तब भी आपका देहाभिमान जैसे था वैसे ही स्थिर रहेगा, जिससे ईश्वर प्राप्ति के आपके सारे प्रयत्न व्यर्थ हो जाएँगे। इसीलिए, ज्ञानी व्यक्ति को इस देहाभिमान को त्यागने के लिए ध्यान करना आवश्यक है, क्योंकि इससे तप, उपोषणादि साधना व्यर्थ हो जाती है। केवल ईश्वर का ध्यान करने से ही आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है। जिससे अखंड ब्रह्मानंद का लाभ होता है और जब मन इस ब्रह्मानंद में पूर्ण रूप से लीन होता है, तब उसे अन्य किसी भी विषय सुख की आस नही रहती। ठीक है, अब जितने चाहिए उतने जामुन लेकर शीघ्र ही अपने अपने घर लौट जाईए।" इतना कहकर सिद्ध अपने घर चल दिया। सभी मित्र सिद्ध के पीछे आनंदित हो कर चल दिए। परंतु रास्ते में एक साँप को देखर भयसे सभी चारो ओर भाग गए। सिद्ध साँप के पास खडा रहकर मित्रों को बोला, "मित्रों, साँप तो मर चुका है, इधर आईए।" परंतु फिर भी उसके मित्र समीप न आए। जब सिद्ध ने हाथ में साँप उठाकर उनको दिखाया, तभी उन्हे विश्वास हुआ और वे धीरे धीरे उसके पास पहुँचे। तब सिद्ध ने उन्हे प्रबोधित किया, "देखो मित्रों, अपने ही हृदय में निवास करने वाले निर्मल आत्मा के बारे में विचार किए बिना दृष्टिगोचर होने वाले इस जगत को देखकर लोग इसी तरह भयभीत हो जाते हैं। जब सद्गुरुजी का उपदेश प्राप्त होता है, तब अंत:चक्षु खुल जाते है और तत्क्षण भासमान होनेवाल जगत्पसार लोप होकर चारो ओर केवल आत्मा की ही सत्ता है उसका उन्हे ज्ञान होता है। तब उन्हें किसी भी वस्तु का रत्तीभर भी भय नही रहता।" उसकी ये बातें सुनकर मित्रों के हृदय में नए विचार प्रकट होने लगे। उसके बाद सभी मित्रों ने सिद्ध को उस के घर तक छोड़ा और वे भी हर्षित होकर अपने अपने घर गए। श्री सिद्धारूढ स्वामीजी की महिमा अगाध होने के कारण उसका वर्णन करते ही जीवात्मा निश्चित रूप से इस भवसागर को पार कर जाता है। जिसका श्रवण करने से सभी पाप भस्म हो जाते हैं, ऐसे इस श्री सिद्धारूढ कथामृत का मधुर सा यह दूसरा अध्याय श्री शिवदास श्री सिद्धारूढ स्वामीजी के चरणों में अर्पण करते हैं। सबका कल्याण हो।

॥ श्री गुरुसिद्धारूढचरणारविंदार्पणमस्तु ॥